अपना लक्ष्य ठीक करें

● बाबा श्रीशाही स्वामीजी महाराज

परमाराध्य सन्त सद्गुरु महर्षि मेँहीँ परमहंसजी महाराज के हृदयस्वरूप पूज्यपाद बाबा श्रीशाही स्वामीजी महाराज का यह प्रवचन सन् १९८२ ई० के पूर्व सद्गुरुदेव के जीवनकाल में हुआ था। —सम्पादक

मंगल मूरति सतगुरू, मिलवैं सर्वाधार। मंगलमय मंगल करण, विनवौं बारम्बार॥
ज्ञान-उदधि अरु ज्ञान-घन, सतगुरु शंकर रूप। नमो-नमो बहु बार हीं, सकल सुपूज्यन भूप॥

उपस्थित सत्संगप्रेमी महानुभावो, माताओ एवं बहनो!

पहले मैं आपलोगों की सेवा में सन्त कबीर साहब का एक भजन गाकर सुनाता हूँ, फिर उसी के आधार पर कुछ सेवा में निवेदन करूँगा :

गगन की ओट निसाना है।
दहिने सूर चन्द्रमा बायें, तिनके बीच छिपाना है॥
तन की कमान सुरत का रोदा, सब्द बान ले ताना है।
मारत बान बिंधा तन ही तन, सतगुरु का परवाना है॥
मार्‌यो बान घाव नहिं तन में, जिन लागा तिन जाना है।
कहै कबीर सुनो भाइ साधो, जिन जाना तिन माना है॥

इस पद्य में सबसे पहली बात 'निशाना' की है। 'निशाना' का अर्थ लक्ष्य, उद्देश्य, प्राप्तव्य आदि है। इस पद्य के द्वारा संत कबीर साहब लक्ष्य ठीक करने की बात कहते हैं। **जिसका लक्ष्य ठीक, उसका सबकुछ ठीक और जिसका लक्ष्य गड़बड़ उसका सबकुछ गड़बड़।** एक बार गुरु द्रोणाचार्य अपने शिष्य कौरव-पाण्डव राजकुमारों को लेकर जंगल गये। वहाँ अपने शिष्यों की धनुर्विद्या की परीक्षा लेने के लिए एक काठ की चिड़िया बनाकर उसे एक वृक्ष की ऊँची डाल पर रखवा दिया और अपने सभी राजकुमार शिष्यों को उसकी दायीं आँख में निशाना लगाने के लिए कहा और कहा कि जब मैं जिसको वाण चलाने को कहूँ, तब वाण चलाना। जब सभी निशाना बाँधकर तैयार हो गये, तब आचार्य ने सबसे पहले युधिष्ठिरजी महाराज से पूछा, 'कहो जी युधिष्ठिर! तुम क्या सब देखते हो?' युधिष्ठिर ने कहा—'गुरुदेव! मैं आपको, भाइयों को, वृक्ष को तथा वृक्ष पर बैठी हुई उस चिड़िया को देखता हूँ।' आचार्य ने कहा—'तुमसे नहीं होगा, तुम हट जाओ।' पुनः आचार्य ने दुर्योधन से पूछा—'दुर्योधन! तुम्हारा निशाना ठीक है?' दुर्योधन ने कहा—'हाँ, ठीक है।' फिर आचार्य ने पूछा—'यह बताओ कि निशाने के अलावा और क्या सब तुम देखते हो?' दुर्योधन ने कहा—'यह पूछने की बात है? सबकुछ देखता हूँ।' आचार्य ने कहा—'तुमसे भी नहीं होगा, तुम भी हट जाओ।' इसी प्रकार आचार्य ने अपने सभी राजकुमार शिष्यों से पूछा और करीब-करीब सबों ने इसी तरह का उत्तर दिया। अन्त में आचार्य ने अर्जुन से पूछा—'कहो जी अर्जुन! तुम्हारा लक्ष्य ठीक है?' अर्जुन ने कहा—'हाँ गुरुदेव!' फिर पूछा कि तुम क्या सब देखते हो? अर्जुन ने कहा—'डाल पर बैठी चिड़िया को देखता हूँ और कुछ नहीं।' आचार्य ने फिर पूछा—'वह डाल कितनी मोटी है, जिसपर चिड़िया बैठी है?' अर्जुन ने कहा—'गुरुदेव! अब तो केवल चिड़िया को ही देखता हूँ।' आचार्य ने कहा—'अच्छा यह बताओ कि चिड़िया का रंग कैसा है?' अर्जुन ने कहा— 'गुरुदेव! अब तो मुझे चिड़िया की केवल वह आँख दिखायी देती है, जिसमें आपने निशाना लगाने के लिए कहा है।' आचार्य ने कहा—'तुम्हारा निशाना ठीक है।

अच्छा वाण छोड़ो।' अर्जुन ने वाण छोड़ा और वह वाण चिड़िया की दायीं आँख में जाकर घुस गया। इस उपाख्यान को एक उदाहरण समझिये। जिस प्रकार लक्ष्य ठीक रहने पर अर्जुन का वाण लक्ष्य पर जाकर लग गया, उसी प्रकार जीवन का लक्ष्य ठीक रहने पर ही लक्ष्य की प्राप्ति होती है। इसलिए इस पद्य के द्वारा सन्त कबीर साहब कहते हैं कि पहले लक्ष्य ठीक करो, तब यह जानो कि वह कैसा है और कैसे प्राप्त होता है।

लक्ष्य क्या है, प्राप्तव्य क्या है, हर एक क्या पाना चाहता है? यों तो चाहना का कोई अन्त नहीं है। सन्त तुलसी साहब ने लिखा है–**'एक दिल लाखों तमन्ना उस पै औ ज्यादा हवस।'** फिर भी समेट कर विचार करने पर मालूम होता है कि हर एक शान्ति चाहता है; क्योंकि शान्ति में सुख होता है। शान्ति सुख की जननी है। शान्ति परमात्मा का ही स्वरूप है, इससे ऊँचा कोई पद नहीं है। श्रीसद्गुरु महाराज के पद्य में है–

अधुन अशब्द सर्वेश्वर कहिये। शान्ति स्वरूप याहि को लहिये॥

ऐसा जो शान्तिस्वरूप परमात्मा है, उसके संबंध में केनोपनिषद् में आया है–

यन्मनसा न मनुते येनाहुर्मनोमतम्।
तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते॥

भावार्थ–जो मन से मनन नहीं किया जाता, बल्कि जिससे मन मनन किया हुआ कहा जाता है, उसी को तू ब्रह्म जान। जिस इस (देशकालाविच्छिन्न वस्तु) की लोग उपासना करते हैं, वह ब्रह्म नहीं है।

पुनः कठोपनिषद् में भी आया है–

वायुर्यथैको भुवनं प्रविष्टो रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव।
एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा रूपं रूपं प्रतिरूपो बहिश्च॥

भावार्थ–जिस प्रकार इस लोक में प्रविष्ट हुआ वायु प्रत्येक रूप के अनुरूप हो रहा है, उसी प्रकार सम्पूर्ण भूतों का एक ही अन्तरात्मा प्रत्येक रूप के अनुरूप हो रहा है और उनसे बाहर भी है।

सन्त कबीर साहब के वचन में है–

अलख निरंजन लखै न कोई। निरभै निराकार है सोई॥
सुंनि अस्थूल रूप नहिं रेखा। द्रिष्टि अद्रिष्टि छिप्यो नहिं पेखा॥
बरन अबरन कथ्यौ नहिं जाई। सकल अतीत घट रह्यौ समाई॥
आदि अन्त ताहि नहिं मधे। कथ्यौ न जाई आहि अकथे॥
अपरम्पार उपजै नहिँ बिनसै। जुगति न जानियैं कथिये कैसे॥
जस कथिये तस होत नहिं, जस है तैसा सोइ॥
कहत सुनत सुख ऊपजै, अरु परमारथ होइ॥

गुरु नानक साहब के वचन में है–

अलख अपार अगम अगोचरि, ना तिसु काल न करमा।
जाति अजाति अजोनी संभउ, ना तिसु भाउ न भरमा॥
साचे सचिआर विटहु कुरबाणु।
ना तिसु रूप बरणु नहिं रेखिआ, साचे सबदि नीसाणु॥१॥
ना तिसु मात पिता सुत बंधप, ना तिसु काम न नारी।
अकुल निरंजन अपर-परंपरु, सगली जोति तुमारी॥२॥
घट-घट अन्तरी-ब्रह्मु लुकाइआ, घटि-घटि जोति सबाई।
बजर कपाट मुकते गुरमती, निरभै ताड़ी लाई॥३॥
जंत उपाइ कालु सिरिजंता, बसगति जुगति सबाई।
सतिगुरु सेवि पदारथु पावहि, छूटहि सबदु कमाई॥४॥
सूचै भाडै साचु समावै, बिरले सूचाचारी।
तंतै कउ परम तंतु मिलाइआ, नानक सरणि तुमारी॥५॥

रामचरितमानस में गो० तुलसीदासजी महाराज लिखते हैं–

बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना।
कर बिनु करम करइ बिधि नाना॥
आनन रहित सकल रस भोगी।
बिनु बानी बकता बड़ जोगी॥
तन बिनु परस नयन बिनु देखा।
ग्रहइ घ्राण बिनु बास असेखा॥
असि सब भाँति अलौकिक करनी।
महिमा जासु जाइ नहिं बरनी॥

और सूरदासजी महाराज कहते हैं–

अविगत गति जानि ना पड़ै।
मन वच कर्म अगाध अगोचर केहि विधि बुधि संचरै॥

सद्ग्रंथों तथा सन्त-वाणियों में इस तरह के ईश्वर-स्वरूप का बहुत वर्णन है, जो जँचने योग्य है। ऐसा जो परमात्मा है, उसे संत कबीर साहब गगन की ओट में बतलाते हैं। और सन्तों की वाणी में है, जैसे—दादूदयालजी महाराज उसे 'सुन्नी सुन्न सुन्न के पारा' बताते हैं। गो० तुलसीदासजी महाराज 'प्रकृति पार प्रभु सब उरवासी' कहते हैं और श्रीगुरु महाराज भी अपने पद्य में कहते हैं, 'पीव निःशब्द में'। गगन की ओट, सुन्नी सुन्न सुन्न के पारा, प्रकृति पार और निःशब्द कहकर एक ही बात कही गई है। दरअसल बात तो यह है कि परमात्मा सर्वव्यापी होने के कारण सब जगह है, परन्तु उसकी पहचान सब जगह नहीं होती। गो० तुलसीदासजी महाराज रामचरितमानस में लिखते हैं—

रूप बिसेष नाम बिनु जाने। करतल गत न परहिं पहिचाने॥

श्रीसद्गुरु महाराज के पद्य में भी है—

पिउ व्यापक सर्वत्र परख आवै नहीं।
गुरुमुख घट ही माहिं परख पावै सही॥

परमात्मा आत्मगम्य है—जीवात्मा से जानने का है। परन्तु जीवात्मा शरीर-इन्द्रियों की लपेट में पड़ गया है। यह जबतक इस लपेट में रहेगा, तबतक शरीर-इन्द्रिय संबंधी ज्ञान में रहेगा, विषय-ज्ञान में रहेगा, माया-ज्ञान में रहेगा, परमात्मा का ज्ञान नहीं होगा। परमात्मा का ज्ञान करने के लिए अपने को शरीर-इन्द्रियों की लपेट से छुड़ाना पड़ेगा। जो शरीर-इन्द्रियों से अपने को अलग कर लेता है, वह संसार से भी अलग हो जाता है। श्रीसद्गुरु महाराज का वचन है—"शरीर और संसार का बड़ा मेल है। जितने तत्त्वों से शरीर बना है, उतने ही तत्त्वों से संसार भी बना है। शरीर में स्थूल, सूक्ष्म भेद से जितने दर्जे या मण्डल हैं, संसार में भी उतने दर्जे या मण्डल हैं। इसलिए शरीर के जिस मण्डल में जब जो रहता है, संसार के भी उसी मण्डल में तब वह रहता है। शरीर के जिस मण्डल को जब जो छोड़ता है, संसार के भी उस मण्डल से तब वह छूट जाता है। इस तरह जो शरीर के सब मण्डलों से छूट जाता है, वह संसार के भी सभी मण्डलों से छूट जाता है। जो शरीर से छूटा, वह संसार से भी छूट गया।" इसी में सन्त कबीर साहब का गगन की ओट, दादूदयालजी का सुन्नी सुन्न सुन्न के पारा, तुलसीदासजी महाराज का प्रकृति पार और श्रीसद्गुरु महाराजजी का निःशब्द में होना हो जाता है। इस तरह शरीर-इन्द्रियों से अपने को अलग कर लेने पर पहले आत्म-ज्ञान, फिर परमात्म-ज्ञान होता है। यह ज्ञान बौद्धिक नहीं होता, बल्कि प्रत्यक्ष पहचानवाला ज्ञान होता है। इस ज्ञान में सारे दुःखों का सदा के लिए अन्त हो जाता है और जीते-जी अर्थात् जीवनकाल में ही परम मोक्ष मिल जाता है।

अब इस स्थिति को प्राप्त करने के लिए सहारा क्या है, तो इसके लिए सन्त कबीर साहब कहते हैं कि सहारा **'दहिने सूर चन्द्रमा बायें तिनके बीच छिपाना है।'** प्राप्त कैसे होगा, तो इसके लिए कहा—तन की कमान पर सुरत का रोदा चढ़ाने से—तब उसपर शब्द का वाण चलेगा। और वह शब्द-वाण सब शरीरों को छेदते हुए शब्दातीत पद, जिसको गगन की ओट आदि कहकर जनाया गया है, से जा लगेगा और तब सुरत भी उसी शब्द के सहारे उस पद में जा मिलेगी। दरअसल यह भजन-भेद की बात है। जिन्हें भजन-भेद मालूम है, वे ही इसे ठीक से समझते हैं। फिर सन्त कबीर साहब कहते हैं कि एक को छेदकर दूसरे शरीर में शब्द का वाण गया, तो इसमें घाव नहीं हुआ अर्थात् तकलीफ नहीं हुई, बल्कि आनन्द हुआ, परमानन्द हुआ। इसलिए भेद जानकर सबको इसका अभ्यास करना चाहिए।

बोलिये श्रीसद्गुरु महाराज की जय!

★